B.A. II Hons

~~[illegible]~~

~~[illegible]~~ WORLD HISTORY

वाणिज्यवाद (Mercantilism)

15वीं शताब्दी के अन्त में शुरु हुए " अन्वेषणों के युग " से लेकर 18वीं शताब्दी के अन्त तक , डचों तथा नीदरलैण्ड के अपवाद को छोड़कर पश्चिमी योरोप की समस्त सरकारों ने जिस नीति का अमल किया, उसे वाणिज्यवाद कहा जाने लगा है। व्यापकतम अर्थों में वाणिज्यवाद की परिभाषा सरकारी हस्तक्षेप की उस व्यवस्था के रुप में की जा सकती है जो राष्ट्र की समृद्धि और राज्य की शक्ति में वृद्धि करने की दिशा में उन्मुख हो। यद्यपि अक्सर इसे सम्पूर्णत. आर्थिक कार्यक्रम की नीति भी कहा माना जाता रहा है, किन्तु इसका उद्देश्य काफी सीमा तक राजनीतिक शक्ति में वृद्धि करना भी था। सच तो यह है कि वाणिज्यवाद का उद्देश्य केवल विनिर्मित वस्तुओं एवं व्यापारिक सामग्रियों की मात्रा में वृद्धि करना ही नहीं था, वरन् राजकोष में अधिकाधिक धन का योगदान देना भी था, ताकि राजा अपने नौ-सैनिक बेड़ों में वृद्धि कर सके, अपनी सेना को नये अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित कर सके, क्योंकि इन्हीं के बलबूते उस राजा की सरकार सम्पूर्ण विश्व में भय उत्पन्न कर सम्मान का पात्र बन सकती थी। अतः राजाओं की यह महत्वाकांक्षा थी। उनकी शक्ति में वृद्धि हो तथा जिस पे राज्य पर इनका शासन चलता है तथा उस राज्य की शक्ति में भी वृद्धि हो - इन दोनों महत्वाकांक्षाओं के कारण वाणिज्यवाद को "राज्यवाद" (Statism) भी कहा जाता रहा है। योरोप में इस राज्यवाद का उदय वस्तुतः विकेन्द्रित संरचना वाले सामन्तवाद के पतन एवं उसके पश्चात निरपेक्ष - निरंकुश राजतंत्रों के उदय के कारण ही सम्भव हो सका। लेकिन केवल राजाओं की प्रेरणा से ही वाणिज्यवाद का विकास हुआ हो- यह भी सत्य नहीं है। व्यापारिक क्षेत्र के प्रमुख सम्पन्न लोगों (बड़े-बड़े व्यापारियों) ने अपने -अपने राजाओं को समर्थन एवं सहयोग दिया था ताकि वे व्यापारिक गतिविधियों में राज्य का सहयोग प्राप्त कर अधिकाधिक लाभ अर्जित कर सकें। वाणिज्यवाद की सरगर्मियों का चरमोत्कर्ष सन् 1600 से 1700 ई. के बीच रहा यद्यपि इसके अनेक महत्वपूर्ण लक्षण 18वीं शताब्दी के बाद भी बने रहे।

बुलियनिज्म (Bullionism) का सिद्धांतः- वाणिज्यवाद एक केन्द्रीय विचारधारा था।इस सिद्धांत की मान्यता यह थी कि किसी राष्ट्र की समृद्धि, उसकी सीमाओं के अन्दर एकत्र की गयी मूल्यवान धातुओं (सोना, चाँदी) की मात्रा द्वारा निर्धारित होती है। जिस देश में अधिकाधिक सोना -चाँदी की मात्रा मौजूद हो, उस देश की सरकार कर के रुप में अधिकाधिक धन एकत्र कर सकती है और वह राज्य अधिकाधिक धन एवं शक्ति सम्पन्न बना रह सकता है।

अतः जिस देश को प्रत्यक्ष रुप से सोना और चाँदी उपलब्ध न हो, उस देश को अपना व्यापार बढ़ाकर सोना-चाँदी प्राप्त करने की कोशिश करनी चाहिए तथा निर्यात की वस्तुओं का व्यापार [illegible]कर करने में सोना-चाँदी प्राप्त करना चाहिए, ताकि देश से जितना [illegible]हर जाय, उससे अधिक सोना-चाँदी व्यापार की बदौलत वह देश में ला[illegible]क्षम हो सके। इसे व्यापार -संतुलन का धनात्मक स्वरुप माना जाने लगा[illegible]व्यापार -संतुलन की इस अवस्था को प्राप्त करने के लिए तीन प्रमुख आनि[illegible]र्यताएं थी - प्रथमतः आयातित वस्तुओं पर ऊँची दरें, ताकि आयात की [illegible]सीमा घटायी जा सके और कुछ वस्तुओं

Scanned by TapScanner

को आयात पूर्णतः समाप्त कर दिया जा सके। द्वितीयतः निर्यात को हर सम्भव प्रोत्साहन तथा तृतीयतः देश के अन्दर उत्पादन एवं विनिर्माण (मैन्युफैक्चरिंग) को अधिकाधिक प्रोत्साहन ताकि निर्यात के लिए या सुदूर देशों में बेचे जाने के लिए अधिकतम वस्तुएँ उपलब्ध होती रहें।

वाणिज्यवाद के सिद्धांत में कुछ ऐसे तत्वों की मौजूदगी भी देखी जा सकती है जिनका सम्बन्ध आर्थिक -राष्ट्रवाद, संरक्षणवाद एवं साम्राज्यवाद से होता है। आर्थिक राष्ट्रवाद का तात्पर्य है - आर्थिक रूप से आत्मनिर्भर। अतः नये उद्योगों को प्रेरित -प्रोत्साहित करने के दो उद्देश्य थे - देश के निर्यात को बढ़ावा देना तथा उस वस्तु की राष्ट्रीय माँग को भी पूरा करना जिसका आयात किया जाता हो (अर्थात उस वस्तु के आयात को समाप्त करना)। इसी प्रकार, वाणिज्यवादियों ने यह तर्क भी प्रस्तुत किया कि सरकार को अपने नागरिकों (या प्रजा) के जीवन पर संरक्षणात्मक निगरानी रखने का अभिभावकीय दायित्व भी निभाना चाहिए। गरीब तबके के लोगों को, चिकित्सा तथा राहत कार्यों का सहयोग भी सरकारों को देना चाहिए। सरकार को ये दायित्व निभाने के लिए प्रेरित करने का केवल यही उद्देश्य नहीं था कि सरकार को दया तथा न्याय की प्रतिमूर्ति के रूप में स्थापित किया जा सके, वरन् इसका उद्देश्य था कि राज्य को एक सुदृढ़ आर्थिक आधार प्राप्त हो सके तथा किसी युद्ध या बाह्य आक्रमण के संकट काल में राज्य को अपने धनी एवं समृद्ध नागरिकों का सहयोग प्राप्त हो सके। अन्तिम तर्क के रूप में वाणिज्यवादी विद्वानों ने सुदूर महाद्वीपों में उपनिवेश स्थापित करने का औचित्य साबित किया। उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि उपनिवेश स्थापित करने के प्रारम्भिक क्रियाकलापों पर यद्यपि काफी धन व्यय होता है, किन्तु अन्ततः ये उपनिवेश अपने स्वामी राष्ट्र और उसके नागरिकों के लिए आर्थिक रूप से लाभकारी होते हैं। अतः उपनिवेश स्थापित करते समय सर्वप्रथम यह ध्यान देना चाहिए कि वे अपने स्वामी राष्ट्रों की मूल्यवान धातुओं (सोना, चाँदी) की आवश्यकता पूरी कर सकें किन्तु यदि उपनिवेशों में ये धातु न हों, तो वे उष्णकटिबन्धीय कृषि -उत्पाद की आपूर्ति कर सकें नौ-सैनिक भण्डार या अन्य तथा ऐसे उत्पादन मुहैय्या करा सकें जो स्वामी राष्ट्र की आवश्यकता एवं माँग के अनुरूप हों।

वाणिज्यवाद के सिद्धांत पर जिन प्रमुख विद्वानों ने लिखा और योगदान दिये उनमें अधिकांश तत्कालीन दार्शनिक -विचारक एवं व्यापारिक जगत से सक्रिय रूप से जुड़े विद्वान थे। विचारकों-दार्शनिकों में कुछ निरपेक्ष -राजनीतिवाद के मुखर समर्थक थे। फ्रांस के जीनबोदिन तथा इंग्लैण्ड के थामस हाब्स। ये विचारक किसी भी ऐसी नीति अथवा विचार का समर्थन करने को सदैव तत्पर रहते थे जिससे राज्य या शासक की शक्ति एवं समृद्धि में वृद्धि हो सके। जबकि वाणिज्यवाद का समर्थन कुछ अन्य विद्वान व्यापार -संतुलन को धनात्मक बनाने के लिए आवश्यक मान कर करते थे। कुछ ऐसे भी विद्वान थे जो राष्ट्र के विदेश व्यापार को राजकीय संरक्षण देने की हिमायत यह सोच करते थे कि राष्ट्र की आन्तरिक समृद्धि के लिए यह आवश्यक है। इनमें से कुछ विद्वानों ने यह भी प्रस्ताव किया कि राज्य को एक विशाल कोष निर्मित करना चाहिए। ताकि वह निर्धन एवं गरीबों के लिए राहत कार्य कर सके, सार्वजनिक महत्व के निर्माण कार्य करवा सके और इन सब के लिए वह कार्य व्यापार -वाणिज्य को प्रोत्साहन दे। वाणिज्यवाद के सिद्धांत को योरोप के सभी देशों ने नहीं अपनाया। निस्संदेह स्पेन को कुछ प्रारम्भिक बढ़त मिल गयी थी और अपने अमेरिकी साम्राज्य (या उपनिवेशों) से प्राप्त होने वाले बहुमूल्य धातुओं की

अतिशय मात्रा ने उसे इस दिशा में कदम उठाने को प्रेरित किया। (Ekel, 3) स्पेन की सरकार ने विदेश व्यापार एवं उद्योग पर कठोर राजकीय नियंत्रण बनाये रखा और इसके लिए कृत्रिम उपायों की इसे कोई आवश्यकता न हुई।

अन्य योरोपीय देशों की नीतियाँ इस प्रकार निर्धारित की गयीं ताकि उन्हें बहुमूल्य धातु भण्डारों से सम्पन्न उपनिवेश न मिलने पर ऐसे उपनिवेश प्राप्त हो सकें जहाँ वे निर्यात व्यापार से लाभ उठा सकें। अतः स्वाभाविक रूप से इन देशों में व्यापार नीतियों को प्रोत्साहन, आयात पर उच्च चुंगी आरोपण एवं विनिर्माण की वस्तुओं एवं उनके परिवहन से सम्बन्धित अनेक नियन्त्रणात्मक कानून बनाने पड़े। व्यापारिक या वाणिज्यवादी नीतियों को इंग्लैण्ड में सबसे अधिक अपनाया गया और रानी एलिज़ाबेथ के शासन से लेकर ओलिवर क्रामवेल के शासन तक इंग्लैण्ड ने व्यापक रूप से इन नीतियों पर अमल किया। योरोपीय देशों के अधिकांश शासक उपनिवेशों पर अपने-अपने अधिकार के लिए लड़ते और युद्ध करते रहे, अपने-अपने देश की व्यापारिक कम्पनियों को एकाधिकारी व्यापार की सुविधाएं प्रदान करते रहे तथा अन्य अनेकों तरीकों से अपनी-अपनी प्रजा के आर्थिक क्रियाकलापों पर नियंत्रण प्राप्त करने की कोशिशों में लगे रहे। कानूनों की एक श्रृंखला पिरोकर, रानी एलिज़ाबेथ ने "कोर्टस ऑफ चैम्बर" (न्यायालय) को अनेक अधिकार सौंप दिये ताकि वह विभिन्न वस्तुओं का मूल्य निर्धारण कर सके, श्रमिकों के कार्य के घंटे तय कर सके तथा सभी स्वस्थ नागरिकों को विवश कर सके कि वे किसी लाभदायक उद्योग में श्रम करें। पहला नौ-परिवहन अधिनियम (नेविगेशन एक्ट) वर्ष 1631 में पारित हुआ, जिसका उद्देश्य था उपनिवेशों से माल परिवहन की व्यवस्था में डच जलयानों के एकाधिकार को समाप्त करना। इस अधिनियम द्वारा ब्रिटिश - उपनिवेशों से ब्रिटेन भेजे जाने वाले माल अब केवल ब्रिटिश जलयानों द्वारा ही भेजे जा सकते थे। दूसरा नौ-परिवहन अधिनियम 1660 में पारित किया गया जिसमें पहले अधिनियम की मूल शर्तों के साथ यह भी जोड़ दिया कि कुछ आवश्यक वस्तुएँ (जिसकी सूची बनायी गई थी) विशेषकर तम्बाकू एवं चीनी सीधे योरोप के बन्दरगाहों को भेजी जा सकती है।

इस अधिनियम के पारित होने से पूर्व विभिन्न ब्रिटिश उपनिवेशों से भेजे गये माल पहले इंग्लैण्ड लाये जाते थे, जहाँ उन्हें चुंगी तथा अन्य शुल्क चुकाने के पश्चात ही किसी योरोपीय बन्दरगाह पर अपने माल उतारने की इजाजत मिलती थी। इन दोनों अधिनियमों से इस सिद्धांत पर प्रकाश पड़ता है कि उपनिवेशों की स्थापना एवं उन पर अधिकार का यही उद्देश्य था कि वे अपने स्वामी देशों की अर्थ व्यवस्था को समृद्ध में योगदान करें।

आन्तरिक समस्याओं में उलझे रहने के कारण जर्मन राज्य उपनिवेशिक संघर्ष और समुद्र व्यापार में सक्रिय हिस्सा न ले सके। फलस्वरूप, जर्मन वाणिज्यवाद अपने राष्ट्र की शक्ति में वृद्धि करने के लिए मुख्यतः आन्तरिक उत्पादन एवं व्यापार पर ही निर्भर रहा। इसी कारण जर्मन वाणिज्यवाद का दुहरा चरित्र निर्मित होने लगा - एक था आर्थिक राष्ट्रवाद और दूसरा, नियोजित (या योजनाबद्ध) समाज का कार्यक्रम। लेकिन समाज के योजनाबद्ध निर्माण का कार्यक्रम मुख्यतः सरकार के हितों को ध्यान में रखकर बनाया जाता था और शायद ही कभी सम्पूर्ण प्रजा के हितों को ध्यान में रखकर बनाया जाता था। राज्य के राजस्व में वृद्धि करने का उद्देश्य जर्मनी के राज्यों में इतना प्रभावी था कि जर्मन वाणिज्यवाद को "कैमरवादी" (Cameralist) भी कहा जाने लगा। (कैमर (Kammer) शाही राजकोष के लिए प्रचलित शब्द) कैमरालिस्ट

विचारों या सिद्धान्तों को प्रशा के होहेनजोलर्न राजाओं ने व्यावहारिक रूप में परिवर्तित कर दिया, विशेषकर फ्रेडरिक विलियम प्रथम (1731-40) तथा फ्रेडरिक महान (1740-86) ने। इन शासकों की राजकीय नीतियों के अनेक ऐसे पहलू थे जिनका उद्देश्य आर्थिक क्रियाकलापों के क्षेत्र में हस्तक्षेप और नियंत्रण प्राप्त करना था ताकि कर लगाये जा सकें तथा धन-सम्पदा में वृद्धि हो और राज्य की शक्ति बढ़े। दलदली भूमि का पुनरुद्धार कर उसे कृषि योग्य बनाया गया, नहरें खोदी गईं, नये उद्योगों की स्थापना की गई तथा किसानों को व्यापक निर्देश दिये गये कि उन्हें अपने खेतों में कौन-कौन सी फसलें उगानी चाहिए। जर्मनी को जल्द से जल्द आर्थिक रूप से आत्म-निर्भर बनाने के उद्देश्य से कच्चे माल के निर्यात एवं विनिर्मित वस्तुओं के आयात को प्रतिबंधित कर दिये गये। इन उपायों से राज्य को मिलने वाले राजस्व का अधिकांश भाग सैन्य-शक्ति को मजबूत बनाने में खर्च किये गये। वाणिज्यवाद के सिद्धांत का सर्वाधिक व्यावहारिक प्रयोग फ्रांस में, लुई 14वें (1643-1715) में किया गया। यह सम्भवतः दो कारणों के पारस्परिक सहयोग से सम्पन्न हो सका, जिनमें प्रथम कारण था - फ्रांस में अत्यन्त शक्तिशाली राजतंत्र की मौजूदगी तथा दूसरा, लुई 14वें के प्रधानमंत्री जीन बैप्टिस्ट कोलबर्ट की शासकीय नीतियाँ। कोलबर्ट कोई सिद्धांतवादी विचारक नहीं वरन् अत्यन्त व्यावहारिक राजनीतिज्ञ था। अतः वह राज्य की प्रशासकीय शक्ति को बढ़ाने एवं मध्यम वर्ग के लिए धन-सम्पत्ति प्राप्त करने के सभी अवसरों का लाभ उठाने को इच्छुक था; क्योंकि वह स्वयं भी इसी वर्ग का सदस्य था। अतएव उसने वाणिज्यवाद को एक लक्ष्य या उद्देश्य के रूप में न अपना कर एक ऐसे सरल साधन के रूप में अपनाया जिससे राज्य की सम्पत्ति एवं शक्ति में वृद्धि हो और उसे अपनी प्रजा का समर्थन अनुमोदन प्राप्त हो सके। उसने ऐसे उपाय किए जिनसे फ्रांस के नागरिक अधिकाधिक प्रत्यक्ष सम्पत्ति प्राप्त कर सकें और इस उद्देश्य के लिए उसने फ्रांस का धन बाहर जाने के सभी द्वार बन्द कर दिए तथा विदेशों से आयात किये जाने वाली सामग्रियों पर ऊँची चुंगी लगा दी, जबकि फ्रांस से वस्तुओं के निर्यात को प्रोत्साहित करने वाले नियम लागू किए। इन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए कोलबर्ट ने साम्राज्यवाद को भी समर्थन दिया ताकि उपनिवेशों में फ्रांस-विनिर्मित वस्तुओं को बेचकर, व्यापार-सन्तुलन को फ्रांस के पक्ष में किया जा सके। अपनी इन्हीं नीतियों के अनुसार उसने "वेस्टइंडीज" के कुछ द्वीप फ्रांस के लिए खरीदे, कनाडा तथा लुसियाना में फ्रांस के लोगों को बसने के लिए प्रोत्साहित किया तथा अफ्रीका एवं भारत में व्यापारिक केन्द्र एवं बन्दरगाह स्थापित किये। इसके साथ-साथ, वह आर्थिक आत्म-निर्भरता के लक्ष्य के प्रति भी उतना ही समर्पित था जितना प्रशा (जर्मनी) के "कैमरलिस्ट"। नये उद्योग एवं व्यापारिक उद्यमों को उसने राजकीय अनुदान (सबसिडी) मुहैया कराये। यहाँ तक कि उसने सरकार द्वारा उन सामानों की बड़े पैमाने पर खरीद करवाई जो सरकार के लिए तो आवश्यक न थे किन्तु उन संघर्षरत फ्रांसिसी कम्पनियों के लिए बहुत आवश्यक थे, जिन्हें कोलबर्ट अपने पाँवों पर खड़ा करना चाहता था। फ्रांस के विनिर्माण उद्योगों [illegible] को राजकीय नियंत्रण अधीन रखने को वह इतना कटिबद्ध था कि उसने नियम-कानूनों के विस्तृत समुच्चय बनाकर यह निर्धारित कर दिया कि फ्रांसीसी उद्योग अपने कच्चेमाल केवल फ्रांस के उपनिवेशों से ही प्राप्त करें तथा विनिर्मित वस्तुओं का उत्पादन फ्रांस के व्यापारिक हितों के अनुसार करें। विनिर्माण की समस्त प्रक्रियाओं को उसने राजकीय नियमों के अन्तर्गत ला दिया। अन्ततः

Scanned by TapScanner

यह उल्लेख करना भी आवश्यक है कि कोलबर्ट ने फ्रांस की राजनीतिक शक्ति को दृढ़ बनाने के लिए प्रत्यक्ष कदम उठाये । उसने फ्रांस की नौ-सैनिक शक्ति को काफी मजबूत बनाया तथा समुद्रतटीय क्षेत्र के नागरिकों, यहां तक कि अपराधियों को भी नौ-सेना में भर्ती के लिए बाध्य करने वाले नियम बनाये। फ्रांस की जनसंख्या को तीव्र गति से बढ़ाने के लिए भी उसने बेहद ठोस कदम उठाये तथा अविवाहित नौजवानों को साधु बनने से हतोत्साहित कर उन्हें विवाह करने तथा बच्चे पैदा करने के लिए प्रोत्साहित किया तथा उन परिवारों को राजकीय कराधान में कुछ विशेष सुविधाएँ और छूट दी गई जिन परिवारों में एक या अधिक बच्चे हों।

———— X ———— X ————

830
320
175
———
1455